ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 434-437

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-III, Issues-18, YEAR- Dec. -2020

बौद्ध दर्शन में मानवतावादी चेतना

संतोष कुमार Email : aaryvart2013@gmail.com

Received- 30.11.2020, Revised- 04.12.2020, Accepted - 11.12.2020

सारांश– बौद्ध दर्शन धर्म मार्ग पर ही बल देता है। इस दर्शन के मानवतावादी चितंन में शुष्क तर्क सिद्धान्त परम्परा तथा गलत धारणा को जगह नही दिया गया है। इतिवुत्तक में तथागत ने कहा है कि– वो धम्मं पस्सति सो मं पस्सति। अर्थात जो धर्म को देखता है वह मुझे देखता है। इससे ज्ञात होता है कि बुद्ध का जीवन सत्य तथा धर्म से युक्त हो गया था। मार्ग सदैव चलने के लिए ही उपयोग में आता है जिस पर चलकर कोई व्यक्ति अपने लक्ष्य को पा लेता है। बुद्ध कहते हैं कि– "कलूपमं वो भिक्खवे धम्मं देसिस्सामि नित्वरणात्याय नो गहणत्याय"। अर्थात हे भिक्षुओं मै जो धर्म तुम्हें दे रह हूँ उसका उपयोग नाव कि तरह करने के लिए, न कि उसको पकड़ने के लिए। इस बात से यह पता चलता है कि धर्म मानव चितंन में आचरण कि बात है। तथागत ने मानव अंधविश्वास तथा परम्परा से निकालकर सम्मानित स्थान प्रदान किया। जिसके कारण मानव जाति हमेशा–हमेशा के लिए ऋणी रहेगी। तथागत बुद्ध कि इस जगत में महत्वपूर्ण देन यह है कि उन्होने सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक समानता की स्थापना किया।

कुंजीभूत शब्द–महत्मा बुद्ध, चातुर्वर्ण्य, समाधि, पंचशील, शीलस्कंध, सामाधिजन्य।

शोध अध्येता– प्राचीन इतिहास, राष्ट्रीय पी0 जी0 कालेज जमुहाई, जौनपुर (उ0प्र0) भारत

अनुरूपी लेखक

महत्मा बुद्ध ने इस जगत में सामाजिक समानता या न्याय को स्थापित किया था। मानव समाज में जाति–पाँति की भावना सामाजिक विषमता की मूल है। जातियता कि नीव चातुर्वर्ण्य सामाजिक व्यवस्था में है। कहा गया है कि–"चार्तु वर्ण्य मयय सृष्ट,गुणकर्म विभागशः"[1] मनुष्य अपने गुण और कर्म का त्याग करके चातुर्वर्ण्य व्यवस्था में ही अपना विश्वास रखता है। अर्थात चतुर्वर्ण्य पीढ़ी दर पीढ़ी परम्परा में चली आयी। यही कार्य सभी सामाजिक समस्याओं की मूल है। जिस चातुर्वर्ण्य व्यवथा ने गुण तथा कर्म को महत्व नही दिया वह मात्र ढकोसला बन कर रह गया है। किसी मनुष्य को केवल जन्म और कुल के कारण श्रेष्टता प्रदान की जाये यह उचित नही लगता है। लेकिन यह स्थिति आज भी हमारे समाज में व्याप्त है। और इस कटु सत्य को हम नाकार नही सकते हैं।

मानव जाति के विस्तृत भाग को अपने विचारो से प्रभावित करना तथा विश्व के अधिकांश भागों मे कुशलतापूर्वक प्रचार–प्रसार पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है तथागत अपने काल के स्वतंत्र विचारको में अन्य लोगों से शक्तिशाली थे। आज संसार मे लोगों के द्धारा जिस पंचशील की बात कि जाती है वह तथागत की ही देन है। लेकिन ध्यान देने की बात यह है कि महात्मा बुद्ध ने देशों के लिए नही, व्यक्तियों के लिए अच्छे विचार, व्यवहार तथा सदाचार के अर्थ में ज्यादा प्रयोग किया था।

महात्मा बुद्ध ने सबसे अधिक बल शील (सदाचार), प्रज्ञा (तत्वज्ञान) और समाधि पर दिया। "शील सम्पन्न होकर समाधि की भावना करनी चाहिए। कुशल चित्त की एकाग्रता समाधि है। जब तक चित्त सुभाषित नही होता तब तक राग से उसकी रक्षा नही होती। जैसे अच्छी तरह छाये हुए घर की वृष्टि से हानि नही होती, उसी प्रकार सुभाषित चित्त में राग को अवकाश नही मिलता"।[2] शील का अर्थ है कि अच्छे कर्मों को करना और बुरे कर्मों को त्याग देना। अहिंसा, अस्तेय सत्य, अपरिग्रह, ब्रम्हचर्य का पालन, मदिरा अन्य दूसरे मादक पदार्थो का सेवन न करना, बौद्ध धर्म मे शीलस्कंध के अंतर्गत आता है जिसे बौद्धो ने 'पंचशील' कहा है शील के बिना किसी सिद्धांत का कोई अर्थ नही है और बिना सिद्धांत युक्त जीवन व्यर्थ है। शील का पालन करते हुए व्यक्ति अपने कार्यों को जब करता है तो वह खुद के साथ–साथ समाज का भी स्तर उठाता है। जो व्यक्ति शील का पालन करते हुए आचरण करता है वह खुद ही सत्य को खोज लेता है और हर तरह के दुःखों से मुक्त हो जाता है। शील का आचरण व्यक्ति को बताता है कि मनुष्य के सत्य भाषण और पवित्रता के साथ हिंसा, द्वेष और बुरे आचरण से बचते हुए चोरी, चुंगली, किसी को कटु वचन बोलना तथा गलत आचरण से हमेशा दूर रहना चाहिए। उसे अपने और अपने परिवार के भरण–पोषण के लिए गलत जीविका का सहारा नही लेना चाहिए।

तथागत शील में अवैर को प्रमुख स्थान देते हैं। उनका मानना था कि अवैर मे वैर अर्थात दुश्मनी की भावना नही होती है। उन सभी कारणों को त्यागना होगा जिसके कारण वैर का जन्म होता है। सभी मनुष्यों में आपसी प्रेम तथा सेवा का भाव होना चाहिए तथा परस्पर समर्पण की भावना होनी चाहिए। इस तथ्य का प्रचार ही करना नही, वरन बुद्ध तथा बौद्धों ने अपने क्रियाकलापों में भी उतारा। महात्मा बुद्ध

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-III, Issues-18, YEAR- Dec. -2020

तथा उनके अनुयायी अपने सिद्धान्त को मानते थे लेकिन वे उसे जबरदस्ती किसी के ऊपर थोपना नही चाहते थे। उनका मानना था कि ज्ञान किसी को समझने से उसकी समझ मे आता है न कि जबरदस्ती उस पर थोपने से। इन्ही सब नियमों का पालन करते हुए बौद्ध ध र्म प्राचीन काल में विश्व में अधिकांश भागों पर छा गया और कभी भी किसी के ऊपर किसी तरह का दबाव नही बनाया। धर्म के इतिहास में यह विशिष्ट सफलता थी। बौद्ध धर्म ने अपने विचारों का प्रचार–प्रसार करने के लिए कभी भी किसी जोर–जबरदस्ती के मार्ग को नहीं अपनाया, वह सदैव समझाकर विचारों को बदलने की कोशिश किया।

शील, समाधि, प्रज्ञा, बौद्ध धर्म मे आचार मीमांसा है। जिसके ज्ञान के बिना कोई ज्ञानी न तो अपना कल्याण कर सकता है, न ही इस जगत का। सत्य तो यह है– "बुद्धधम्म ने भारत के इतिहास में पहली बार शील और सदाचार को सही अर्थों में प्रस्तुत किया और इन्हें उचित प्रमुखता प्रदान की, जिसकी आज भी उतनी ही उपयोगिता है जितनी बुद्ध के जमाने मे थी"।[3] वर्तमान समय के परिप्रेक्ष्य मे शील हमे यह ज्ञान प्रदान करता है कि सर्वप्रथम हमें सदाचरण का पालन करना चाहिए क्योंकि दुराचरण व्यक्ति का विनाश कर देता है, इसलिए दुराचरण के मार्ग पर नही जाना चाहिए। अच्छे आचरण द्वारा ही समाज में आपसी प्रेम, बंधुत्व तथा शांति को प्राप्त किया जा सकता है। आज संसार मे शील एवं सदाचार की उपेक्षा की जा रही है जिसका परिणाम यह है कि हर जगह दुराचरण और असहिष्णुता फैली हुई है। महात्मा बुद्ध का सामाधिजन्य ज्ञान बताता है कि यदि कोई सोच विचार करके कार्य करे तो वह स्वयं से होने वाले कार्यों से बच सकता है। प्रज्ञावान व्यक्ति अविद्या से अपना पीछा छुड़ा सकता है। प्रज्ञा के अभाव मे कोई व्यक्ति समाज तथा देश को कुछ भी नहीं दे सकता। अंधकार से प्रकाश की ओर समाज को लाने के लिए प्रज्ञावन होना आवश्यक है। प्रज्ञावान व्यक्ति ही समाज में शांति, सौहार्द और समानता की स्थापना कर सकता है। बौद्ध धर्म में शील, समाधि, प्रज्ञा पर जो विशेष जोर दिया गया है, उसका उद्देश्य है कि संसार लोक कल्याण की भावना को उन्नयन करना। शील वह रत्न है जो शत्रुता की जगह मित्रता को लाता है। तथागत का कहना था–

"नहि वेरेन वेरानि सम्मन्तीधकुदाचनं।
अवेरे न च सम्मन्ति एसधम्मो सनन्तनों"।।[4]

शील से मनुष्य में करुणा भी पैदा होती है जो उसे उत्तम मार्ग पर ले जाती है–

करूण रहिय जो सुण्णहि लग्गा।
णउ सो पावइ उन्तिम मग्गा।।[5]

अर्थात करुणा–रहित होकर जो व्यक्ति शून्यता की समाधि लगाता है वह उत्तम मार्ग को प्राप्त नही कर सकता है।

महात्मा बुद्ध तथा उनके अनुयायियों ने मन के संयम तथा शक्तियों के विकास पर विशेष बल दिया, जिसे प्राप्त करने के लिए वे भावना तथा योग का सहारा लिए। तथागत बुद्ध देववाद, देवपूजा, बुद्ध पूजा को आम जनमानस के लिए जरूरी समझते थे। देवताओं के विषय में वे उसी तरह उदारता दिखाते हैं जिस प्रकार कला और भाषा के विषय में। सभी देश के आदरणीय देवता बौद्धों की देवभाषा मे स्थान प्राप्त कर सकते थे, जिसके कारण हमारे देवता, तुम्हारे देवता का संघर्ष पैदा नही हुआ। बौद्ध धर्म का अनुसरण करने वाले देशों में जहाँ भारत के इंद्र तथा ब्रह्मा को सम्मानित स्थान प्राप्त है वहीं स्थानीय देवताओं को भी समुचित स्थान प्राप्त है। संघर्ष का जो प्रमुख कारण बन सकता था, समाज में उसका हल आपसी सामंजस्य से कर लिया गया।

महात्मा बुद्ध सामाजिक क्षेत्र में असमानता को समाप्त करके समानता लाने का प्रयास किए थे। इसके लिए वे वर्ण तथा जाति व्यवस्था का खुलकर विरोध केवल सैद्धांतिक रूप से ही नही, वे व्यवहारिक रूप से भी किये। गौतम बुद्ध का रूढ़िवादी विचारधाराओं के विरुद्ध यह तर्क था कि इस समाज में कोई भी व्यक्ति जन्म के आधार पर छोटा या बड़ा नहीं हो सकता है, उनका मानना था कि किसी व्यक्ति की वास्तविक स्थिति का बोध उनके कर्मों के द्वारा होता है। इसका अर्थ यह है कि किसी मनुष्य का व्यवहार ही उसकी स्थिति का निर्धारण करता है। तथागत बुद्ध ने अपने संघ में ब्राह्मण से लेकर चाण्डाल तक को सम्मिलित होने का समान अवसर प्रदान किया। प्राचीन कालीन व्यवस्था मे व्यक्ति को जाति के आधार पर छोटा या बड़ा माना जाता था। बुद्ध का जन्म शाक्य वंश मे हुआ था। इस वंश के लोगों को इस बात का अभिमान था कि उनकी जाति से बुद्ध हैं तथा अनिरुद्ध आदि कुछ और लोग भिक्षु बनने जा रहे हैं। इनके साथ इनका नौकर उपालि भी था जो नाई जाति का था। उपालि ने सोचा कि ये लोग जब अपनी धन संपत्ति को त्यागकर भिक्षु बनने जा रहे हैं तो मैं भी क्यों न चलकर भिक्षु बन जाँऊ। उपालि के मत को जानकर अनिरुद्ध ने कहा कि "तब तुम्हें पहले भिक्षु बनना पड़ेगा। इन लोगों के खून में जाति अभिमान है। यदि हम पहले भिक्षु बने और तुम बाद में तो भगवान के उपदेशानुसार छोटा होने के कारण तुम्हें हमारी वंदना करनी पड़ेगी जिससे हमारा अभिमान अक्षुण्ण रहेगा। तुम अगर पहले भिक्षु बन जाओगे तो हमारे ज्येष्ठ हो जाओगे। हम तुम्हारी वंदना करेंगे। इस प्रकार हमारे अभिमान को बल नही मिलेगा"।[6] वे ऐसा ही किये जिसके कारण उपालि ज्येष्ठ बौद्ध

PIF-7.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-III, Issues-18, YEAR- Dec. -2020

भिक्षु बनें। बुद्ध के निर्वाण के पश्चात बुद्ध के उपदेशों को संग्रह करने के लिए जो प्रथम बौद्ध संगीति का आयोजन किया गया उसमें उपालि की योग्यता के कारण उन्हें एक विभाग का प्रधान बनने का अवसर प्राप्त हुआ क्योंकि भिक्षु नियमों में अपने समय के सबसे बड़े ज्ञाता थे। भिक्षु जीवन व्यतीत करते समय कोई भिक्षु किसी भिक्षु से उसकी जाति नही पूछता था। वह केवल पूछता था कि उसे भिक्षु हुए कितने वर्षावास बीते। जिससे पता चल जाता था कि वह भिक्षु कितना ज्येष्ठ है या कितना छोटा। यहाँ जाति और कुल किसी का नही पूछा जाता था। तथागत बुद्ध ने सामाजिक क्षेत्र में जो विषमता हटाने का प्रयास किया वह केवल भिक्षुओं के लिए ही नही था वरन आम जनमानस के लिए भी था, जिसका उनके मध्य प्रचार–प्रसार भी किया गया। महात्मा बुद्ध के जीवन में बौद्ध धर्म ने तत्कालीन समाज मे जातिप्रथा, वर्ण व्यवस्था को समाप्त करने मे असफल रहा फिर भी यह कहना तर्कसंगत नही होगा कि उस पर किसी तरह का कोई प्रभाव नही पड़ा। वर्णव्यवस्था तथा जाति प्रथा को शिथिल करने में बौद्ध धर्म की बहुत बड़ी भूमिका है। जाति–पाँति तथा वर्ण व्यवस्था के विरुद्ध भगवान बुद्ध ने लोगों मे जो भावना पैदा की वह आज भी संतो तथा उनके अनुयायियों मे दिखाई देता है। बुद्ध ने कहा था– "सभी मे मोक्ष प्राप्त करने की क्षमता समान है तथा प्राप्त किये गये मोक्ष मे कोई अंतर नही होता है"।[7]

राजनीतिक क्षेत्र मे बुद्ध तथा बौद्ध धर्म के प्रभाव से इन्कार नही किया जा सकता है। राजनीतिक क्षेत्र मे बौद्ध धर्म को आंशिक सफलता ही प्राप्त हुई। राजनीतिक क्षेत्र में बुद्ध ने गणराज्य को महत्व प्रदान किया। उनका जन्म भी शाक्यों के गण में हुआ था। वे वैशाली और लिच्छवियों को हृदय से प्रेम तथा सम्मान देते थे। गण व्यवस्था का अनुपालन करते हुए वे भिक्षु–भिक्षुणियों के संघ में जनतांत्रिक व्यवस्था की स्थापना किये थे। वे संघ के नियंत्रण का अधिकार किसी व्यक्ति विशेष को नही सौंपा बल्कि उनकी व्यवस्था के अनुसार संघ पर सभी लोगों का सामूहिक नियंत्रण था। किसी विषय पर निर्णय लेने के लिए सामूहिक बैठक का प्रावधान था, जिसमें सदस्यों की कम से कम कुछ संख्या उपस्थित होना अनिवार्य था, जिसे 'कोरम' कहा जाता था। बुद्ध ने उत्तर भारत मे कोरम की संख्या दस तथा अन्य जगहों के लिए पांच निश्चित किया था। किसी भी बात पर संघ का मतभेद नही होता था यदि थोड़ा बहुत होता भी था तो उसे आपसी चर्चा परिचर्चा द्वारा सुलझा लिया जाता था। ऐसी स्थिति में बहुमत का निर्णय ही मान्य होता था। मत को जानने के लिए मतगणना का प्रावधान था जिससे अल्पमत तथा बहुमत का पता चलता था। मतदान के लिए लकड़ी के शालाकाओ का प्रयोग किया जाता था। लकड़ी दो रंग की होती थी जिसमे एक रंग हाँ तो दूसरा रंग न का परिचायक था, जिसको संघ के लोग अपने अपने मत के अनुसार उठा लेते थे। जिनको उठाकर अध्यक्ष बहुमत की घोषणा करता था। बुद्ध के समय मे राजतंत्रात्मक तथा गणतंत्रात्मक दोनो शासन पद्धतियाँ प्रचलित थी।

महात्मा बुद्ध ने मानव समाज में फैली बुराइयों से छुटकारा पाने के लिए लोगों को उपदेश दिया। तथागत बुद्ध ने मानव समाज को अहिंसा का उपदेश देकर एक कल्याणकारी कार्य किया। उन्होंने कहा कि मनुष्यों को हिंसा नहीं करना चाहिए क्योंकि "इस संसार में अहिंसा से बड़ा कोई धर्म नहीं है, **अहिंसा परमोः धर्मः"**।[8] बुद्ध ने कहा कि मनुष्य को आपस में प्रेम और सौहार्दपूर्ण जीवन व्यतीत करना चाहिए, मन में कटुता की भावना नहीं लाना चाहिए, जो लोग मन में कटुता की भावना रखते हैं उनका मन कभी शांत नहीं रहता। तथागत बुद्ध ने क्रोध को मानव का शत्रु बताया। उनका कहना था कि क्रोध मनुष्य के अच्छे बुरे समझने की क्षमता को समाप्त कर देता है। बुद्ध कहते हैं कि क्रोध करना छोड़ दो, अभिमान को छोड़ दो, सब बंधनो को नष्ट कर दो, उनका कहना था–असाधु को जीतने के लिए साधुता का प्रयोग करना चाहिए, अक्रोध से क्रोध को विजित करना चाहिए, कंजूस को दान देकर तथा झूठ बोलने वाले से सत्य से जीतें– अक्कोधेन जिने क्रोधं असाधुं साधुना जिने।

जिने कदरिथं दानेन सच्चेनाली कवादिनम्।।[9]

महात्मा बुद्ध का कहना था कि मानव को दूसरे की कमियों को और दूसरे के अच्छे तथा बुरे कामों को नहीं देखना चाहिए। उसे केवल अपने द्वारा किए जाने वाले अच्छे–बुरे कार्यों को देखना चाहिए–

न परेसं विलोमनि न परेसं कताकतं। अत्तनौ न अवेक्खवेथ्य कतानि अकतानि च।।[10]

अच्छी संगति पर विचार व्यक्त करते हुए तथागत बुद्ध ने कहा कि यदि रास्ते में चलते हुए मनुष्य को अपने ही समान कोई अच्छा साथी न मिले तो उस व्यक्ति को अकेले चला जाना चाहिए, लेकिन मूर्ख व्यक्ति का साथ नहीं देना चाहिए–

एकचरियं दकहं कयिरानथि बाले सहायता।[11]

बौद्ध विचारधारा समस्त मानव जाति के लिए एक समान अधिकार की बात करता है। महात्मा बुद्ध ने घोषणा की कि सभी मनुष्य समान हैं। न कोई बड़ा ना कोई छोटा। मनुष्य अपने कर्म से छोटा और बड़ा होता है। उन्होंने जाति प्रथा का खण्डन करते हुए कहा

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-III, Issues-18, YEAR- Dec. -2020

कि यहाँ केवल एक ही जाति है और वह है मानव जाति। उन्होंने कहा कि व्यक्ति को खुद के ऊपर निर्भर रहना चाहिए, पराश्रित नही होना चाहिए। तथागत बुद्ध ने कहा कि हर मनुष्य को अपना पथ प्रदर्शक खुद बनना चाहिए– "'अत्त दीपः ष्वथ अत्त शरणाः' अर्थात तुम अपने लिए स्वयं दीपक बनो, धर्म की शरण में जाओ, किसी दूसरे का आश्रय न खोजो" ।12 उन्होंने कहा कि क्षमाशीलता परम तप है, व्यक्ति को क्षमाशील होना चाहिए। किसी की निंदा नही करना चाहिए, किसी को चोट पहुँचाना अनुचित है, प्रतिमोक्ष के नियमों का अनुशरण करना चाहिए, चित्त को योग से युक्त रखना चाहिए। "मनुष्यों को परस्पर कठोर वचन न कहना चाहिए। कठोरता से बोले गए शब्द के पश्चात मनुष्य तुम्हें वैसा ही उत्तर देंगे। कठोर वचन दुःखदायी होते हैं और प्रतिहिंसा की भावना तुम्हें स्पर्श करेगी" ।[13]

महात्मा बुद्ध ने मानव जाति के लिए करुणा तथा मैत्री का संदेश दिया। वे प्राणियों का कल्याण करना चाहते थे। सभी लोगों के दुःखों को दूर करने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहते थे। वह कहते थे– "मनुष्य को स्वार्थ की भावना का परित्याग कर बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय की भावना में स्वयं को केंद्रित करना होगा, तभी मानवतावादी भावना फलीभूत होगी।"14 महात्मा बुद्ध के असीमित करुणा से युक्त विशाल ह्रदय में मानवता की सेवा करना मुख्य उद्देश्य था। वे बहुजन हिताय तथा प्राणियों के कल्याण की कामना सदैव करते रहते थे। बौद्ध विचारधारा बुद्ध के इच्छाओं, आशाओं तथा महत्वाकांक्षाओं के अनुसार संपूर्ण मानवता के लिए शांति और आत्मोन्नति की स्थापना करने में सफल हुई। जिसके परिणामस्वरूप मानव जाति में समन्यवय, सौहार्द तथा वैश्विक भाईचारे की स्थापना करने में सफल हुआ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. गीता
2. धम्मपद
3. विश्व सभ्यता को बुद्धधम्म की देन, सुरेन्द्र अज्ञात, पृष्ठ–19
4. महामानव बुद्ध, राहुल सांकृत्यायन, पृष्ठ–68
5. महामानव बुद्ध, राहुल सांकृत्यायन, पृष्ठ–112
6. धम्मपद
7. मज्झिम निकाय, द्वितिय,129
8. बौद्ध दर्शन मीमांसा, आचार्य बलदेव उपाध्याय, पृष्ठ–377
9. धम्मपद, कोधवग्गो, 3
10. धम्मपद, पुष्पवग्गो–7
11. धम्मपद, बालबग्गो–2
12. संस्कृति के चार अध्याय, रामधारी सिंह दिनकर, पृष्ठ–136
13. धम्मपद दण्डवग्गो–5
14. संस्कृति के चार अध्याय, रामधारी सिंह दिनकर, पृष्ठ–150

*****